शुद्ध संकल्प से विजय

(लेखक श्री विश्वामित्र जी ब्रह्मचारी, आश्रम)

प्रिय पाठक वृन्द ! मनुष्य के मन का धर्म कल्पना करना है । जागृति में मनुष्य का मन तर्क, वितर्क, कुतर्क के बिना नहीं रह सकता, यदि मनुष्य का मन संकल्प विकल्प की कल्पना करता ही रहेगा, तो फिर उसको ठीक प्रकार की कल्पना करने की शिक्षा क्यों न दी जावे ? ताकि यह ठीक मार्ग पर चलकर अपने लक्ष्य की तरफ बढ़ सके यह सुशिक्षा से होगा सुशिक्षा के अभाव में मन इस आत्मा को नीचे गिरावेगा । सुशिक्षा से ही मन उत्तम मार्ग पर चलता हुआ उत्तम संकल्प करके अपनी अवस्था उच्चा बना सकता है ।

मनुष्य की उन्नति की कोई अवधि नहीं है मनुष्य का अभ्युदय मर्यादा से परिमित नहीं है । परन्तु जब अपने ही कुतर्कों से परिमित होता है तब मनुष्य के सामने उदासीनता उत्पन्न होती है । इसलिये ऋषि मुनियों ने सिद्धान्त बनाया है कि "मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः" मनुष्यों का मन ही उनके स्वातन्त्र्य और पारतन्त्र्य का कारण है उत्तम सुसंस्कारों से शुद्ध मन धारण करने वाले मनुष्य स्वातन्त्र्य सुख अर्थात् मुक्ति आनन्द प्राप्त करते हैं और जिनका मन गुलामी के कुत्सित विचारों से परिपूर्ण होता है, वे सदा परतन्त्रता के विविध बन्धनों में फंस कर जीते और मरते रहते हैं । मन की शक्ति इस प्रकार से विलक्षण है । मन ही कल्पतरु है कल्पनाओं का तरु अर्थात् वृक्ष मन ही है । जैसी कल्पना आप करेंगे वैसे ही आप बन जावेंगे आप के मन की इतनी विलक्षण शक्ति है । इसीलिये आपको सावधान रहना चाहिये । अन्यथा जैसी चाहे वैसी कल्पना मन में आ जावेगी और आप का जीवन का परिणाम बड़ा भयानक हो जायगा इसलिये वेद ने कहा है

"सुषारथिरश्वानिवयन्मनुष्यान्नेनीयतेभीशुभिर्वाजिन इव ।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ॥"

"जिस प्रकार उत्तम सारथी रथ के घोड़ों को लगामों के द्वारा उत्तम मार्ग पर ही ले जाता है, उसी प्रकार जो मन मनुष्यों की इन्द्रियों को चलाता है वह हृदय निवासी उत्साही और वेगवान मेरा मन सदा उत्तम संकल्प करने वाला होवे ।" वेद का यह उत्तम उपदेश है । परन्तु क्या इस प्रकार वैदिकधर्मी चल रहे हैं ? जो मनुष्य इस उपदेश के अनुसार अपने मन की शक्ति को जानेंगे और उस विलक्षण शक्ति को अपने स्वाधीन रख कर उत्तम कर्म में ही उस शक्ति का उपयोग करेंगे वे लोग ही इस लोक में अभ्युदय और परलोक का निःश्रेयस निःसंदेह प्राप्त कर सकेंगे । वैदिक धर्म का यह प्रताप है कि यह धर्म जहां रहेगा, वहां अभ्युदय और निःश्रेयस सदा प्रकाशित होते रहेंगे वैदिक धर्म के होने का तात्पर्य आचरण करने से है न कि केवल विचार और उच्चारण से । केवल विचार उच्चारण और लेखों में वैदिक धर्म को रखने वाले कभी उन्नत नहीं हो सकते । यहां कटिबद्ध होकर

सदा शुद्ध आचरण का ही माहात्म्य है उक्त वेद मन्त्र का उपदेश आचार प्रधान ही है । इसलिये पाठकों से प्रार्थना है कि जो कुछ वे वेद के मन्त्रों में पढ़ें शीघ्र ही आचरण में लाने का यत्न करें । एक समय हमारे यहां तोते के समान कंठ करने वाले वेद भक्त थे अब अर्थ का डंका बजाने वाले वेद भक्त हैं । आचरण की दृष्टि दोनों के पास शून्य ही है । 'मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।' इस मन्त्र का केवल पाठ करने वाले और केवल अर्थ जानने वाले दोनों तब तक उन्नत नहीं होंगे जब तक वे अपना मन शुभ संकल्पमय नहीं करेंगे । एक कुली था जिसके सिर पर खांड की बोरी थी परन्तु उसको बोरी के अन्दर क्या वस्तु है इस का पता न था । उस के पीछे से दूसरा कुली आया उस को पता था कि अपने सिर पर की बोरी में मिश्री है, परन्तु वह बोरी का स्वामी न होने के कारण उसको खा नहीं सकता था । मिश्री का आस्वादन लेने की दृष्टि से दोनों का अधिकार भार सहने का ही है । इसी प्रकार वेद को केवल कंठ करने वाले और केवल घमंड के साथ अर्थों का शास्त्रार्थ करने वाले दोनों नीचे ही रहेंगे, परन्तु जो वेद के उच्च उपदेश के समान अपना आचरण बनावेगा वही उच्च पदवी पा सकता है । इस लिये वेद का पढ़ना पढ़ाना, सुनना सुनाना, तथा वेद के उपदेश के अनुसार स्वयं आचरण करना उच्च श्रेणी के मनुष्यों का परम धर्म है । इसलिये उक्त मन्त्र का विचार मन में सदा निहित रखिये । शरीर रूपी इस उत्तम रथ में जीवात्मा बैठा है और उस रथ को दस घोड़े खैंचते हैं मन इस रथ में सारथी है, और आत्मा प्रवासी है । मालिक–स्वामी–धनी–इन्द्र जीवात्मा ही है । जहां वास्तव में उसको जाना है उसी जाने वाले मार्ग पर से इस रथ की गति होनी चाहिये । यदि मन रूपी सारथी शराब पीकर उन्मत्त होगा अथवा दस घोड़े अपने योग्य मार्ग को छोड़ कर जिधर चाहें उधर भटकने लगेंगे तो इस शरीर की और प्रवासी जीवात्मा की कैसी अवस्था होगी आप ही सोच सकते हैं । और पश्चात् आप अपनी अवस्था भी सोचिए । क्या आप अपने मन इन्द्रिय और शरीर के सच्चे स्वामी बने हैं ? क्या आप के हित के मार्गपर से आपका मन सब इन्द्रियों को चलाता है ? क्या क्रोध कामादि घातक पत्थरों से युक्त भयानक स्थानों में आप का रथ नहीं जा रहा है ? क्या सब मनोविकारों पर आप का प्रभुत्व स्थापित हुआ है ? क्या आप का मन कभी कुविचारों के गड्ढों में मूर्च्छित होकर पड़ता नहीं ? क्या आपका मन सदा शुभ कल्पनाओं में और शुभ कर्मों में ही रमता है ? यदि नहीं तो आपको उचित है कि वैदिक धर्म के शुभ नियमों के अनुकूल चल कर आप मन के उत्तम स्वामी बन जाइए । दूसरे व्यवहार आप के काम नहीं आवेंगे जो इस काम को छोड़ कर दूसरे ही कामों में लगता है वही दस्यु होता है देखिए वेद कहता है —

"अकर्मा दस्युरभि नो अमन्तुरन्यव्रतो अमानुषः ॥"

मनुष्यों में दस्यु वह होता है जो पुरुषार्थ प्रयत्न नहीं करता, सुविचार नहीं करता, दूसरे ही कार्य करते रहता है और उन्नति के कार्य को छोड़ देता है और मनुष्यत्व के अयोग्य कुत्सित कर्म करता रहता है ये दस्यु के लक्षण हैं । इनसे आलसी, अविचारी कुकर्मी हो जाते हैं । हर एक को सोचना चाहिये कि अपने द्वारा किस

श्रेणी के कर्म हो रहे हैं ? आप जानते हैं कि सुख बाहर से प्राप्त नहीं हो सकता आप की मानसिक अवस्था पर ही सुख अवलंबित है, आप सुखी हैं या दुखी हैं इस का विचार कीजिए । आप दुखी होने पर दूसरों को बुरा भला कहने के लिये प्रवृत्त हो रहे हैं, यही बड़ी भारी गलती है यही प्रवृत्ति बहुत बुरी है । अपने मन की अवस्था के कारण ही आपको दुःख हो रहा है । देखिये सोचिए और अपने मन की परीक्षा कीजिए वेद कहता है कि "मन को शुभ विचारमय दक्षता से युक्त और पुरुषार्थ के विचारों से उत्साही बनाइए फिर आप के पास दुःख कहां रहेगा ।" इसलिये कहा है कि —

मनो यज्ञेन कल्पताम् ॥

मन सत्कर्म में लगाइए । यही एक उपाय है, दूसरा कोई उपाय नहीं है । इस को छोड़ कर यदि आप अन्य कुव्यवहारों में अपना कदम बढ़ायेंगे तो आप अन्य व्रती होने के कारण दस्यु बनेंगे । अपना समय व्यर्थ नहीं खोना चाहिये । अश्लील उपन्यास निंदा से भरे हुये अखबार व्यर्थ गपोड़ों के स्तव, निरर्थक गप्पाष्टिक आदि में अपना समय न गवाइये । गया हुआ समय फिर नहीं मिलेगा जो सत्य समय है उसका अत्यन्त योग्य उपयोग कीजिये । वेद ने कहा है कि (—)

आयुर्यज्ञेन कल्पतां प्राणो यज्ञेन कल्पतां
चक्षुर्यज्ञेन कल्पतां श्रोत्रं यज्ञेन कल्पतां
वाग् यज्ञेन कल्पतां मनो यज्ञेन कल्पतां
आत्मा यज्ञेन कल्पतां ब्रह्मा यज्ञेन कल्पतां
ज्योतिर्यज्ञेन कल्पतां स्वत्वं यज्ञेन कल्पतां

हे लोगो ! आप को उचित है कि आप अपनी आयु, प्राण, चक्षु, श्रोत्र, वाणी, मन, आत्मा, ज्ञान, तेज स्वत्व आदि जो कुछ अपनी शक्ति है वह सब सत्कर्म के लिए अर्पण कीजिए । क्योंकि सत्कर्म के बिना जो आयु चली जाती है वह व्यर्थ है । समय पर योग्य सत्कार्य करने का अभ्यास कीजिए जिससे आप थोड़े समय में बहुत सत्कर्म करेंगे । यदि आप सत्कर्म करने में देरी करेंगे तो निश्चय जानिए कि उन्नति होनें में भी उतनी ही देर लगेगी ।

अपने ऊपर आत्मविश्वास रखिए । बोलने चालने में अपना विश्वास और अपनी अचल श्रद्धा रखिये अपने विषय में जिस को संशय है वह अधोगति में जाता है । अपनी शक्ति और अपनी दक्षता पर निश्चय पूर्वक पूर्ण विश्वास रखिये वेद ने कहा है कि —

स्वं महिमानमायजतां । यजुर्वेद

अपने प्रभाव का गौरव अपने मन में रखिए इससे आत्मा उठता है और शक्ति बढ़ती है । अपने जीवन का उद्देश (उद्देश्य) बनाकर सत्पुरुषों, सद्गुरुओं, महात्माओं और उपकारी जनों की खोज कीजिए । उनके सत्संग से मन को ठीक मार्ग पर चलाने की विधि मालूम हो जावेगी । उनका सहारा लेकर उत्साह पूर्वक पुरुषार्थ में लग जाइए । मन को ठीक मार्ग पर डाल दीजिए फिर यह आप को साधारण मनुष्य से महान् पुरुष बना देगा । समस्त जगत् के पदार्थ, ऐश्वर्य और भोग सब

तुम्हारे ही होंगे । भक्ति मुक्ति तुम्हारी दासी होगी और तुम अनन्त आनन्द के स्वामी हो जाओगे ।